2 फरवरी 2009, कुल पृष्ठ : 8, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-61 / 2009-11

जैन पथप्रदर्शक

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

ज्ञान को स्वभावसन्मुख करने के विकल्प से ज्ञान स्वभाव सन्मुख नहीं होता; अपितु इस विकल्प के भी भार से निर्भार होने पर ज्ञान स्वभाव सन्मुख होता है।

ह्न क्रमबद्धपर्याय : पृष्ठ ह्न 35

वर्ष : 31, अंक : 21 सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** आजीवन शुल्क : 251 रुपये

फरवरी (प्रथम), 2009 प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा** वार्षिक शुल्क : 25 रुपये

श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय की -

साहित्यिक व सांस्कृतिक प्रतियोगिताऐं सम्पन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के अन्तर्गत प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास हेतु शास्त्री तृतीय वर्ष के छात्रों द्वारा दिनांक 5 जनवरी 2009 से 13 जनवरी 2009 तक विभिन्न आध्यात्मिक एवं खेल-कूद प्रतियोगितायें सम्पन्न कराई गयी।

जिसमें **वॉइस ऑफ स्मारक प्रतियोगिता (भजन प्रतियोगिता)** में विवेक जैन दलपतपुर व संदीप पाटील ने प्रथम तथा प्रफुल्ल शेडगे ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। प्रतियोगिता की अध्यक्षता श्रीमती प्रमीलाजी कासलीवाल ने की। इस अवसर पर निर्णायक के रूप में श्रीमती अर्चनाजी पाटनी एवं श्री गौरवजी छाबड़ा मंचासीन थे। प्रतियोगिता का संचालन अंकित जैन लूणदा एवं शशांक जैन सागर ने किया।

'जैन सिद्धान्तों की वर्तमान जीवन में उपयोगिता' विषय पर आयोजित **उपाध्याय वर्ग की वाद-विवाद प्रतियोगिता** में **पक्ष** से सर्वज्ञ भारिल्ल जयपुर ने प्रथम व आशीष जैन टोंक ने द्वितीय तथा **विपक्ष** से कु. प्रतीति पाटील जयपुर ने प्रथम व रजित जैन भिण्ड ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। इसकी अध्यक्षता प्रो. नेमीचंदजी जैन ने की। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि पण्डित धर्मेन्द्रकुमारजी शास्त्री, निर्णायक पण्डित मनीषजी खतौली एवं पण्डित मनीषजी खड़ैरी थे। संचालन सुधीर जैन अमरमऊ एवं गजेन्द्र जैन भीण्डर ने किया।

उपाध्याय वर्ग की तात्कालिक भाषण प्रतियोगिता में कु. प्रतीति पाटील ने प्रथम एवं कु. श्रुति जैन दिल्ली ने द्वितीय स्थानप्राप्त किया। इसकी अध्यक्षता प्रो. प्रकाशचंदजी जैन ने की। निर्णायक पण्डित संजीवजी खड़ैरी एवं मुख्य अतिथि पण्डित प्रवीणकुमारजी शास्त्री थे। प्रतियोगिता का संचालन सोमिल जैन खनियांधाना एवं नीलेश जैन मुहारी ने किया।

श्लोकपाठ प्रतियोगिता में अजय जैन पीसांगन ने प्रथम व सुधीर जैन ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। इस प्रसंग पर अध्यक्ष के रूप में प्रो. बीनाजी अग्रवाल तथा निर्णायक व अतिथि के रूप में क्रमश: पण्डित परेशकुमारजी शास्त्री तथा पण्डित संजयजी शास्त्री बड़ामलहरा मंचासीन थे। प्रतियोगिता का संचालन तपिश जैन उदयपुर और भरत कोरी ने किया।

अंत्याक्षरी प्रतियोगिता में सजल जैन सिंगोड़ी व विवेक जैन ने प्रथम तथा आशीष जैन मड़ावरा व विवेक जैन मड़देवरा ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। प्रतियोगिता के निर्णायक पण्डित धर्मेन्द्रकुमारजी शास्त्री एवं पण्डित प्रवीणकुमारजी शास्त्री थे। अंत्याक्षरी का सचांलन संदीप जैन शाहपुरा व संदीप पाटील ने किया।

'कार्य पुरुषार्थ से या नियति से'विषय पर आयोजित **शास्त्री वर्ग** की **वाद-विवाद प्रतियोगिता** में **पक्ष** से सुधीर जैन व अनुराग जैन भगवां ने प्रथम स्थान तथा तपिश जैन ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। **विपक्ष** से राहुल जैन नौगाँव ने प्रथम व अंकित जैन ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। प्रतियोगिता की अध्यक्षता पण्डित शुद्धात्मप्रकाशजी भारिल्ल जयपुर ने की। मुख्य अतिथि के रूप में पण्डित पीयूषकुमारजी शास्त्री जयपुर तथा निर्णायक के रूप में पण्डित नीतेशकुमारजी शास्त्री मंचासीन थे। संचालन अजय जैन पीसांगन व महेन्द्र मिरकुटे ने किया।

शास्त्री वर्ग की तात्कालिक भाषण प्रतियोगिता में गजेन्द्र जैन भीण्डर ने प्रथम व अजय जैन ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। संचालन अनुराग जैन व संदीप चौगुले ने किया। इसकी अध्यक्षता श्री दिलीपभाई शाह ने की। निर्णायक के रूप में डॉ. दीपकजी वैद्य जयपुर एवं मुख्य अतिथि के रूप में श्री बी. एल. सेठी व पण्डित शांतिकुमारजी पाटील जयपुर विराजमान थे।

अंग्रेजी भाषण प्रतियोगिता में प्रथम स्थान सुधीर जैन व द्वितीय स्थान संयम शेटे कोल्हापुर ने प्राप्त किया। निर्णायक के रूप में श्री फोकस इंस्टिट्यूट से आशीषजी, श्री ए.एल. शाह एवं श्री हुक्मीचंदजी जैन मंचासीन थे। इसकी अध्यक्षता श्री विनोदकुमारजी शर्मा ने की। संचालन दीपक मजलेकर आलते व कु. स्वाति जैन जयपुर ने किया।

काव्य पाठ प्रतियोगिता में दीपेश जैन अमरमऊ ने प्रथम एवं शनि जैन खनियांधाना ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। अध्यक्षता प्रो. सुरेन्द्रजी उपाध्याय ने की। निर्णायक के रूप में श्री कैलाशजी सेठी एवं पण्डित अनिलजी शास्त्री खनियांधाना मंचासीन थे। संचालन तपिश जैन एवं सुधीर जैन ने किया।

इन प्रतियोगिताओं के अतिरिक्त क्रिकेट, कबड्डी, खो-खो, बॉलीबॉल, बैडमिंटन, कैरम, शतरंज, दौड आदि प्रतियोगिताओं का भी आयोजन विद्यार्थियों के लिए किया गया।

सभी प्रतियोगिताएँ शास्त्री तृतीय वर्ष के संयोजकत्व में सम्पन्न हुई।

सम्पादकीय -

चलते-फिरते सिद्धों से गुरु

21

(गतांक से आगे ...) - पण्डित रतनचन्द भारिल्ल

८. उत्तमत्याग के स्पष्टीकरण में प्रवचनसार की गाथा २३९ की टीका करते हुए आचार्य जयसेन ने जो लिखा है, उसका भाव इसप्रकार है - 'निज शुद्धात्मा को ग्रहण करके बाह्य और आभ्यन्तर परिग्रह की निवृत्ति त्याग है।'

'जिनेन्द्र भगवान् ने कहा है कि जो जीव समस्त परद्रव्यों से मोह छोड़कर संसार, देह और भोगों से उदासीनरूप परिणाम रखता है; उसके त्यागधर्म होता है।'

'परभाव को पर जानकर उसको ग्रहण न करना त्याग है।'

'तप के प्रकरण में तो नियतकाल के लिए सर्वत्याग किया जाता है और त्याग में अनियतकाल के लिए यथाशक्ति त्याग किया जाता है।'

उक्त कथनों से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि यद्यपि त्याग शब्द निवृत्तिसूचक है, त्याग में बाह्य और अभ्यन्तर परिग्रह का त्याग होता है; तथापि त्यागधर्म में निजशुद्धात्मा का ग्रहण अर्थात् शुद्धोपयोग और शुद्धपरिणति भी शामिल है।

एक बात और भी स्पष्ट होती है कि त्याग परद्रव्यों का नहीं, अपितु अपनी आत्मा में परद्रव्यों के प्रति होने वाले मोह-राग-द्वेष का होता है; यही कारण है कि वास्तविक त्याग पर में नहीं, अपने ज्ञान में होता है। यही भाव कुन्दकुन्दाचार्यदेव ने समयसार में इसप्रकार व्यक्त किया है -

सव्वे भावे जम्हा पच्चक्खाई परे त्ति णादूणं।
तम्हा पच्चक्खाणं णाणं णियमा मुणेयव्वं ।।३४।।

अपने से भिन्न समस्त परपदार्थों को 'ये पर हैं' - ऐसा जानकर जब त्याग किया जाता है, तब वह प्रत्याख्यान अर्थात् त्याग कहा जाता है। इससे यह सिद्ध होता है कि वस्तुतः ज्ञान ही प्रत्याख्यान अर्थात् त्याग है।

''जैसे कोई पुरुष धोबी के घर में भ्रमवश दूसरे का वस्त्र लाकर, उसे अपना समझ ओढ़कर सो रहा है और अपने आप ही अज्ञानी हो रहा है; किन्तु जब दूसरा व्यक्ति उस वस्त्र का छोर पकड़कर खींचता है और उसे नग्न कर (उघाड़कर) कहता है कि 'तू शीघ्र जाग, सावधान हो, यह मेरा वस्त्र बदले में आ गया है, यह मेरा है सो मुझे दे दे'; तब बार-बार कहे गये इस वाक्य को सुनता हुआ वह, सर्व चिन्हों से भलीभाँति परीक्षा करके, 'अवश्य वह वस्त्र दूसरे का ही है' - ऐसा जानकर, ज्ञानी होता हुआ, उस वस्त्र को शीघ्र ही त्याग देता है।

इसीप्रकार ज्ञाता भी भ्रमवश परद्रव्य के भावों को ग्रहण करके उन्हें अपना जानकर अपने में एकरूप करके सो रहा है और अपने आप अज्ञानी हो रहा है। जब श्रीगुरु परभाव का विवेक करके उसे एक आत्मभावरूप करते हैं और कहते हैं कि 'तू शीघ्र जाग, सावधान हो, यह तेरा आत्मा वास्तव में एकज्ञानमात्र ही है'; तब बारम्बार कहे गये इस आगमवाक्य को सुनता हुआ वह, समस्त चिन्हों से भली-भाँति परीक्षा करके' अवश्य यह परभाव ही है' - यह जानकर ज्ञानी होता हुआ, सर्व परभावों को तत्काल छोड़ देता है।''

उक्त कथन से यह बात अच्छी तरह स्पष्ट हो जाती है कि त्याग पर को पर जानकर किया जाता है; पर दान में यह बात नहीं है।

९. उत्तम आकिंचन्य में कहा है कि - ज्ञानानन्दस्वभावी आत्मा को छोड़कर किंचित्मात्र भी परपदार्थ तथा पर के लक्ष्य से आत्मा में उत्पन्न होने वाले मोह-राग-द्वेष के भाव आत्मा के नहीं हैं - ऐसा जानना, मानना और ज्ञानानन्दस्वभावी आत्मा के आश्रय से उनसे विरत होना, उन्हें छोड़ना ही उत्तमआकिंचन्यधर्म है।

आकिंचन्य और ब्रह्मचर्य को दशधर्मों का सार एवं चतुर्गति दुःखों से निकालकर मुक्ति में पहुँचा देने वाला महानधर्म कहा गया है -

आकिंचन ब्रह्मचर्य धर्म दश सार हैं।
चहुँगति दुःखतैं काढ़ि मुकति करतार हैं।।

वस्तुतः आकिंचन्य और ब्रह्मचर्य एक सिक्के के दो पहलू हैं। ज्ञानानन्दस्वभावी आत्मा को ही निज मानना, जानना और उसी में जम जाना, रम जाना, समा जाना, लीन हो जाना ब्रह्मचर्य है और उससे भिन्न परपदार्थों एवं उनके लक्ष्य से उत्पन्न होने वाले चिद्विकारों को अपना नहीं मानना, नहीं जानना और उनमें लीन नहीं होना ही आकिंचन्य है।

यदि स्वलीनता ब्रह्मचर्य है तो पर में एकत्वबुद्धि और लीनता का अभाव आकिंचन्य है। अतः जिसे अस्ति से ब्रह्मचर्यधर्म कहा जाता है, उसे ही नास्ति से आकिंचन्यधर्म कहा गया है। इसप्रकार स्व-अस्ति ब्रह्मचर्य है और पर की नास्ति आकिंचन्य।

आकिंचन्य का विरोधी परिग्रह है अतः आकिंचन्य का दूसरा नाम अपरिग्रह भी है। जिस परिग्रह के त्याग से आकिंचन्यधर्म प्रकट होता है, वह परिग्रह दो प्रकार का होता है - आभ्यन्तर और बाह्य।

आत्मा में उत्पन्न होने वाले मोह-राग-द्वेषादिभावरूप आभ्यन्तर परिग्रह को निश्चयपरिग्रह और बाह्यपरिग्रह को व्यवहारपरिग्रह भी कहा जाता है।

व्यवहारनय की अपेक्षा से क्षेत्रादिक परिग्रह हैं; क्योंकि वे आभ्यंतर-परिग्रह के कारण हैं। इनका त्याग करना निर्ग्रन्थता है। निश्चयनय की अपेक्षा से मिथ्यात्व कषायें एवं नोकषायें परिग्रह हैं; क्योंकि वे कर्मबंध के कारण हैं और उनका त्याग करना निर्ग्रन्थता या अपरिग्रह है।''

इसप्रकार आकिंचन्यधर्म के लिये आभ्यंतर और बाह्य दोनों प्रकार के परिग्रह का त्याग आवश्यक है।

आभ्यन्तर परिग्रह चौदह प्रकार के होते हैं -

१. मिथ्यात्व, २. क्रोध, ३. मान, ४. माया, ५. लोभ, ६. हास्य, ७. रति, ८. अरति, ९. शोक, १०, भय, ११. जुगुप्सा (ग्लानि), १२. स्त्रीवेद, १३. पुरुषवेद और १४. नपुंसकवेद।

बाह्य परिग्रह दश प्रकार के होते हैं -

१. क्षेत्र (खेत, प्लाट), २. वास्तु (निर्मित भवन), ३. धन (चाँदी, सोना, जवाहरात, मुद्रा), ४. धान्य, ५. द्विपद (मनुष्य, पक्षी), ६. चतुष्पद (पशु), ७. यान (सवारी), ८. शय्यासन, ९. कुप्य, १०. भांड।

इसप्रकार परिग्रह कुल चौबीस प्रकार के माने गये हैं।

कुछ भी परद्रव्य मेरा नहीं है - ऐसे अकिंचनपने के भाव को आकिंचन्य

कहते हैं। जो मुनि राग-द्वेष उत्पन्न करनेवाले उपकरणों को छोड़ता है। ममत्व उत्पादक वसतिका आदि को छोड़ता है, उस मुनि के आकिंचन धर्म होता है।

१०. उत्तम ब्रह्मचर्य के स्पष्टीकरण में कहा गया है कि – 'मोक्षमार्ग में ब्रह्मचर्य को अन्तिम सीढ़ी माना गया है, क्योंकि ब्रह्म अर्थात् आत्मा में रमणता करना ही वास्तविक ब्रह्मचर्य है। 'ब्रह्म' शब्द का अर्थ निर्मल ज्ञानस्वरूप आत्मा है, उस आत्मा में लीन होने का नाम ब्रह्मचर्य है। जिस मुनि का मन अपने शरीर के सम्बन्ध में भी निर्ममत्व हो चुका है, उसी के ब्रह्मचर्य होता है।

'जीव ब्रह्म है, जीव ही में जो मुनि की चर्या होती है, उसको परदेह की सेवा रहित ब्रह्मचर्य जानो।'

ब्रह्म अर्थात् निजशुद्धात्मा में चरना, रमना ही ब्रह्मचर्य है। जैसा कि 'अनगार धर्मामृत' में कहा है –

''या ब्रह्मणि स्वात्मनि शुद्धबुद्धे चर्या परद्रव्यमुचप्रवृत्तिः।
तद् ब्रह्मचर्य व्रतसार्वभौमं ये पान्ति ते यान्ति परं प्रमोदम्।।४/६०।।

परद्रव्यों से रहित शुद्ध-बुद्ध अपने आत्मा में जो चर्या अर्थात् लीनता होती है, उसे ही ब्रह्मचर्य कहते हैं। व्रतों में सर्वश्रेष्ठ इस ब्रह्मचर्य व्रत का जो पालन करते हैं, वे अतीन्द्रिय आनन्द को प्राप्त करते हैं।''

इसीप्रकार का भाव 'भगवती आराधना' एवं 'पद्मनन्दि-पंचविंशतिका' में भी प्रकट किया गया है।

अतः यह स्पष्ट है कि निश्चय से ज्ञानानंदस्वभावी निजात्मा को ही निज मानना, जानना और उसी में जम जाना, रम जाना, लीन हो जाना ही वास्तविक ब्रह्मचर्य है। आज जो ब्रह्मचर्य शब्द का अर्थ समझा जाता है, वह अत्यन्त स्थूल है।

आज मात्र स्पर्शन इन्द्रिय के विषय-सेवन के त्यागरूप व्यवहार ब्रह्मचर्य को ही ब्रह्मचर्य माना जाता है। स्पर्शन इन्द्रिय के भी सम्पूर्ण विषयों के त्याग को नहीं, मात्र एक क्रियाविशेष (मैथुन) के त्याग को ही ब्रह्मचर्य कहा जाता है, जबकि स्पर्शन इन्द्रिय का भोग तो अनेक प्रकार से संभव है।

स्पर्शन इन्द्रिय के विषय आठ हैं – १. ठंडा, २. गरम, ३. कड़ा, ४. नरम, ५. रुखा, ६. चिकना, ७. हलका और ८. भारी।

इन आठों ही विषयों में आनन्द का अनुभव करना स्पर्शन इन्द्रिय के विषयों का ही सेवन है। गर्मियों के दिनों में कूलर एवं सर्दियों में हीटर का आनन्द लेना स्पर्शन इन्द्रिय का ही भोग है। इसीप्रकार डनलप के नरम गद्दों और कठोर आसनों के प्रयोग में आनन्द अनुभव करना तथा रूखे-चिकने व हल्के-भारी स्पर्शों में सुखानुभूति – यह सब स्पर्शन-इन्द्रिय के विषय हैं कि ये सब स्पर्शन इन्द्रिय के विषय हैं, हमें इनमें भी सुखबुद्धि त्यागनी होगी। इससे यह सिद्ध होता है कि हम स्पर्शन इन्द्रिय के भी सम्पूर्ण भोग को ब्रह्मचर्य का घातक नहीं मानते, अपितु एक क्रियाविशेष (मैथुन) को ही ब्रह्मचर्य का घातक मानते हैं; और जैसे-तैसे मात्र उससे बचकर अपने को ब्रह्मचारी मान लेते हैं।

यदि आत्मलीनता ब्रह्मचर्य है तो क्या स्पर्शन इन्द्रिय के विषय ही आत्मलीनता में बाधक नहीं हैं? यदि हैं, तो उनके भी त्याग को ब्रह्मचर्य कहा जाना चाहिये। क्या रसना इन्द्रिय के स्वाद लेते समय आत्मस्वाद लिया जा सकता है? इसीप्रकार क्या सिनेमा देखते समय आत्मा देखा जा सकता है?

नहीं, कदापि नहीं; क्योंकि आत्मा किसी भी इन्द्रिय के विषय में क्यों न उलझा हो, उस समय आत्मलीनता संभव नहीं है। जब तक पाँचों इन्द्रियों के विषयों से प्रवृत्ति नहीं रुकेगी, तबतक आत्मलीनता नहीं होगी और जबतक आत्मलीनता नहीं होगी, तबतक पंचेन्द्रियों के विषयों से प्रवृत्ति का रुकना भी संभव नहीं है। इसप्रकार पंचेन्द्रिय के विषयों से प्रवृत्ति की निवृत्ति यदि नास्ति से ब्रह्मचर्य है तो आत्मलीनता अस्ति से ब्रह्मचर्य है।

सुनो ! शास्त्रों में जो कामभोग के त्याग को ब्रह्मचर्य कहा है, कामभोग का अर्थ केवल स्पर्शन-इन्द्रिय का ही भोग नहीं है, बल्कि स्पर्शन और रसना इन्द्रियों के विषयों को काम माना है; और घ्राण चक्षु, कर्ण इन्द्रिय के विषयों को भोग माना है। इसप्रकार समयसार की चौथी गाथा की तात्पर्यवृत्ति में जयसेनाचार्य ने काम और भोग में पंचेन्द्रिय विषयों को ले लिया है।

आचार्य उमास्वामी ने तत्त्वार्थसूत्र में ब्रह्मचर्यव्रत की भावनाओं और अतिचारों की चर्चा करते हुए लिखा है –

स्त्रीरागकथाश्रवणतन्मनोहरांगनिरीक्षणपूर्वरतानुस्मरणवृष्येष्टरसस्व-शरीरसंस्कारत्यागाः पंच ।।अध्याय ७, सूत्र ७।।

परविवाहकरणेत्वरिकापरिगृहतापरिगृहीतागमनानंगक्रीड़ाकामतीव्राभि-निवेषा ।।अध्याय ४, सूत्र २८।।

इसमें श्रवण, निरीक्षण, स्मरण, रसस्वाद, शृंगार, अनंग क्रीड़ा आदि को ब्रह्मचर्य का घातक कहा गया है।

यदि हम पंचेन्द्रिय के विषयों में निर्बाध प्रवृत्ति करते रहें और मात्र स्त्री संसर्ग का त्याग कर अपने को ब्रह्मचारी मान बैठें तो यह एक भ्रम ही है। तथा यदि स्त्री-संसर्ग के साथ-साथ पंचेन्द्रिय के विषयों को भी बाह्य से छोड़ दें, गरिष्ठादि भोजन भी न करें; फिर भी यदि आत्मलीनतारूप ब्रह्मचर्य अन्तर में प्रकट नहीं हुआ तो भी हम सच्चे ब्रह्मचारी नहीं हो पावेंगे। अतः आत्मलीनतापूर्वक पंचेन्द्रिय के विषयों का त्याग ही वास्तविक ब्रह्मचर्य है।

जो मुनि स्त्रियों की संगति नहीं करते उनके रूप को नहीं देखते, काम की कथा आदि व उनके स्मरणादिक से रहित हो, उसके नवकोटि से ब्रह्मचर्य होता है। इसप्रकार धर्म के दस लक्षणों को संक्षेप में कहा।●

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

7 से 13 फरवरी	सोनागिरी	पंचकल्याणक प्रतिष्ठा
23 से 27 फरवरी	सम्मेदशिखरजी	शिलान्यास समारोह
1 से 3 मार्च	जयपुर	राजस्थान वि. वि. में संगोष्ठी
13 से 29 मई	कोलारस	प्रशिक्षण शिविर
1 जून से 22 जुलाई	यूरोप व अमेरिका	धर्म प्रचारार्थ यात्रा
26 जुलाई से 4 अगस्त	जयपुर	आध्यात्मिक शिक्षण शिविर

आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर सानन्द सम्पन्न

करेली (म. प्र.) : यहाँ श्री सीमंधर जिनालय में अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन करेली द्वारा दिनांक 24 दिसम्बर से 30 दिसम्बर तक आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर का आयोजन किया गया। इस अवसर पर प्रतिदिन गुरुदेवश्री के सी.डी. प्रवचन, जिनेन्द्र भक्ति, सामूहिक कक्षायें एवं विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किये गये।

शिविर में प्रतिदिन पण्डित नन्दकिशोरजी मांगुलकर काटोल, पण्डित संदीपजी रावतभाटा एवं पण्डित अनुभवजी मौ द्वारा ली गई कक्षाओं एवं प्रवचनों का लाभ प्राप्त हुआ।

शिविर में करेली के अतिरिक्त सिवनी, जबलपुर, बालाघाट, सागर जिलों के लगभग 180 लोगों ने धर्मलाभ लिया। शिविर की सफलता से उत्साहित होकर श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट करेली द्वारा प्रतिवर्ष दिसंबर माह में इसीतरह शिविर लगाने की घोषणा की गई।

जिनमंदिर वर्षगांठ महोत्सव सानन्द सम्पन्न

पोन्नूर (तमिलनाडू) : आचार्य कुन्दकुन्द की साधनास्थली पोन्नूर में दिनांक 29 दिसम्बर से 2 जनवरी, 09 तक आचार्य कुन्दकुन्द जैन संस्कृति सेन्टर द्वारा निर्मित जिनमंदिरका नौवाँ वर्षगांठ महोत्सव मनाया गया।

इस अवसर पर प्रात: जिनेन्द्र पूजन के पश्चात् गुरुदेवश्री के समयसार ग्रंथाधिराज की पाँचवीं-छठवीं गाथा पर हुये सी.डी. प्रवचनों के अतिरिक्त पण्डित हेमंतभाई गाँधी के प्रतिदिन समयसार पर हुये प्रवचनों का लाभ मिला। दिनांक 1 जनवरी को अनन्तराय ए. सेठ, श्री निमेषभाई शांतिलाल शाह, श्री हितेन भाई सेठ एवं श्री राजेशभाई जवेरी द्वारा ध्वजारोहण किया गया। इस अवसर पर पर्वतराज पर विराजमान भगवान महावीरस्वामी के पूजन-प्रक्षाल का विशेष लाभ मिला। समस्त कार्यक्रमों में श्री विराग शास्त्री और श्री नीलेशभाई का विशेष सहयोग रहा।

पुस्तक समीक्षा –

ध्यान का स्वरूप : जैनदर्शन के आलोक में

'ध्यान' आज का बहुचर्चित विषय है। इस विषय पर एक ऐसी पुस्तक की आवश्यकता बहुत समय से अनुभव की जा रही है; जो जिनागम के परिप्रेक्ष्य में इस विषय को आज के संदर्भ में प्रस्तुत कर सके। डॉ. भारिल्ल की प्रस्तुत कृति ने निश्चित रूप से उक्त आवश्यकता की पूर्ति की है। यदि लोग निष्पक्ष भाव से इस कृति का अध्ययन करेंगे तो ध्यान के संदर्भ में उनकी वर्तमान धारणाओं का परिमार्जन अवश्य होगा।

जो विषयवस्तु शताधिक पृष्ठों में प्रस्तुत करना भी एक दुष्कर कार्य था; उस विषयवस्तु को इस लघुकाय कृति में सर्वांग प्रस्तुत कर दिया गया है। इस कृति का स्वाध्याय करने से ध्यान के संदर्भ में वर्तमान में चलनेवाली बहुत सी भ्रांतियों का निराकरण होगा।

आत्मार्थी भाई-बहनों से मेरा अनुरोध है कि इसे एकबार नहीं, अनेकबार आद्योपान्त पढ़ें और अच्छी लगे तो इसे जन-जन तक पहुँचाने में सहयोग करें।

इसकी सौ प्रतियाँ मात्र चार सौ रुपये में उपलब्ध है। इसकी सौ दो सौ प्रतियाँ मंगाकर अपने इष्ट मित्रों, भाई-बहनों और संबंधियों तक अवश्य पहुँचायें। **– पण्डित रतनचंद भारिल्ल**

फैडरेशन कोटा संभाग द्वारा

स्नेह मिलन एवं गोष्ठी सम्पन्न

कोटा : यहाँ श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु आश्रम ट्रस्ट गिरधरपुरा में दिनांक 25 जनवरी को अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन कोटा संभाग के तत्त्वावधान में स्नेह मिलन समारोह तथा 'स्वाध्याय एवं तत्त्वप्रचार' पर विचार गोष्ठी का आयोजन किया गया।

कार्यक्रम का प्रारम्भ प्रात: 8 बजे पूजन एवं भगवान आदिनाथ के मोक्ष कल्याणक का निर्वाण महोत्सव मनाकर किया। समारोह में श्रीमान् सुखमालजी जैन (चौधरी) भीलवाड़ा परिवार द्वारा झण्डारोहण किया गया।

इस अवसर पर पण्डित संजीवकुमारजी गोधा जयपुर ने अपने मांगलिक प्रवचन के माध्यम से स्वाध्याय करने पर विशेष बल दिया।

प्रवचनोपरान्त श्री उत्तमचंदजी भारिल्ल अजमेर (प्रांतीय अध्यक्ष जैन युवा फैडरेशन) की अध्यक्षता में गोष्ठी का आयोजन किया गया। मुख्य अतिथि डॉ. नीलेश जैन(सह-प्राचार्य मेडिकल कॉलेज एवं विभागाध्यक्ष यूरोलोजी विभाग महाराव भीमसिंह चिकित्सालय) थे। विशिष्ट अतिथि के रूप में श्री प्रेमचन्दजी बजाज मंचासीन थे।

गोष्ठी में पण्डित श्री धर्मचंदजी जैथल, पण्डित श्री संजयजी शास्त्री भैंसरोड़गढ़, पण्डित जयकुमार जैन बाँरा, श्री प्रेमचंदजी बजाज कोटा एवं श्री ज्ञानचंदजी कोटा ने अपने विचार व्यक्त किये।

मुख्य अतिथि डॉ. नीलेश जैन ने विद्वानों के उद्‌बोधन को सुनकर प्रतिदिन स्वाध्याय करने का नियम लिया।

अध्यक्षीय उद्‌बोधन में डॉ. उत्तमचन्दजी भारिल्ल ने प्रांत में चलनेवाली गतिविधियों की विस्तृत जानकारी दी।

इस अवसर पर पण्डित जयकुमारजी जैन महामंत्री जैन युवा फैडरेशन कोटा संभाग ने बताया कि हम गाँव-गाँव जाकर पाठशालायें खोलेंगे एवं स्वाध्याय करने के लिये लोगों को प्रेरित करेंगे। पण्डित रतनचन्दजी शास्त्री ने मुमुक्षु आश्रम की गतिविधियों का परिचय दिया।

फैडरेशन संभाग द्वारा उपस्थित महानुभावों द्वारा स्वाध्याय करने के फार्म भराये गये। सभी ने इस तरह के कार्यक्रम आयोजित होते रहने की भावना व्यक्त की।

इसमें संभाग के जिला कोटा, बूंदी, बाँरा, झालावाड़, भीलवाड़ा, चित्तौड़ के विभिन्न शहर एवं गाँव के 800 साधर्मियों ने भाग लिया।

मंगलाचरण समकित मोदी ने एवं संचालन श्री पी.के हरसौरा ने किया।

देवलाली में विशेष शिविर का आयोजन

पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट अत्यंत हर्ष के साथ निवेदन कर रहा है कि देवलाली में दिनांक 14 से 18 मार्च 2009 तक कर्मकांड शिविर का आयोजन किया जा रहा है। इस शिविर की खास विशेषता यह है कि इसमे डॉ. उज्जवला शहा 5 दिन तक प्रतिदिन 6 घंटे एक ही विषय प्रस्तुत करेंगी। सभी साधर्मियों को शिविर का लाभ लेने के लिये हार्दिक आमंत्रण है। आपके आगमन की पूर्व सूचना निम्न पते पर देवें –

पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट,
कहान नगर, बेलतगाँव रास्ता, लाम रोड़, देवलाली,
जिला – नासिक (महाराष्ट्र), फोन नं. – 0253-2491044

जैन अल्पसंख्यक इंजिनीयरींग कॉलेज

श्री ऐलक पन्नालाल दिगंबर जैन पाठशाला, सोलापूर (इ.स.1885 संस्थापित) द्वारा संचलित,

वालचंद इन्स्टिट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, सोलापूर

"A" ग्रेड संस्था

(इ.स.1983 संस्थापित)

अशोक चौक, सोलापूर - 413 006 (महाराष्ट्र) दूरभाष : 0217 - 2652700 फॅक्स: 0217 - 2651538

सकल जैन समाज के छात्रों को चार वर्षीय डिग्री इंजिनियरींग कोर्स मे प्रथम वर्ष प्रवेश के लिए 50% सिटें आरक्षित है।

महाराष्ट्र के बाहरी उम्मीदवारोंको MHT-CET 09 परीक्षा देना अनिवार्य है।

परीक्षा की तिथी : 7 मई 2009

इस परीक्षा की अधिक जानकारी के लिए www.dte.org.in तथा www.dmer.org देखें।

वर्ष २००९-२०१० प्रवेश प्रक्रियाकी विस्तृत जानकारी यथा समय हमारे कॉलेज के वेबसाईट पर उपलब्ध होगी।

तथा

प्रथम श्रेणीमें उत्तीर्ण डिप्लोमा धारक को

Direct Second Year Engineering प्रवेश के लिए भी 50% सीटे आरक्षित है।

हमारी विशेषताएँ :-
- More than 100 PG Teachers
- Almost 100% Campus Placement
- More than 60 Companies for Campus Recruitment

महाविद्यालय तथा प्रवेश प्रक्रिया के बारेंमे अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें :

प्रा. प्रसन्न एखंडे : 09422457311 प्रा. संजीव जमगे : 09822790360

डॉ. एस.ए. हलकुडे
प्राचार्य

डॉ. रणजित गांधी
सेक्रेटरी

Website: www.witsolapur.org **E-mail** : principal@witsolapur.org

मोक्षमार्ग प्रकाशक का सार 21

चौथा प्रवचन

- डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

मोक्षमार्गप्रकाशक नामक शास्त्र में प्रतिपादित विषय-वस्तु की चर्चा चल रही है। इसके प्रथम अधिकार में मंगलाचरण, पंचपरमेष्ठी का स्वरूप, पढ़ने-सुनने योग्य शास्त्र, वक्ता-श्रोता का स्वरूप एवं ग्रन्थ की प्रामाणिकता आदि विषयों पर प्रकाश डाला गया है।

दूसरे अधिकार में कर्मबन्धन का निदान, घाति-अघाति कर्म और उनके कार्य, चार प्रकार के बंध, कर्मों की सत्ता और उनके उदय से होने वाली विभिन्न अवस्थाओं का विशद निरूपण किया गया है।

तीसरे अधिकार में अबतक संसार के दुःख और उनके मूल कारणों की कर्मों की अपेक्षा तथा एकेन्द्रियादि पर्यायों और चारगतियों की अपेक्षा से गहरी मीमांसा की गई है। अब दुःखों का सामान्य स्वरूप स्पष्ट किया जा रहा है। इसके बाद मोक्षसुख और उसकी प्राप्ति के उपाय की चर्चा करेंगे।

'दुःख का सामान्य स्वरूप' इस मोक्षमार्गप्रकाशक शास्त्र का एक ऐसा प्रकरण है कि जो अन्यत्र दुर्लभ है। इसमें पण्डितजी चार प्रकार की इच्छाओं की चर्चा करते हैं; जो इसप्रकार हैं -

१. विषय, २. कषाय, ३. पाप का उदय और ४. पुण्य का उदय।

पाँच इन्द्रियों के माध्यम से देखने-जानने की इच्छा का नाम **विषय** है और कषायभावों के अनुसार कार्य करने की इच्छा का नाम **कषाय** है।

यद्यपि इन विषय और कषाय नामक इच्छाओं में अन्य कोई पीड़ा नहीं है; तथापि जबतक इन्द्रियविषयों का ग्रहण नहीं होता अर्थात् देखना-जानना नहीं होता और अपनी इच्छा के अनुसार कार्य नहीं होता; तबतक यह जीव अत्यन्त व्याकुल रहता है।

पापकर्म के उदय से प्राप्त अनिष्ट संयोगों को दूर करने की इच्छा का नाम **पाप का उदय** है। जबतक वे अनिष्ट संयोग दूर न हो, तबतक यह जीव महा व्याकुल रहता है।

उक्त तीन प्रकार की इच्छाओं के अनुसार प्रवर्तन करने की इच्छा का नाम **पुण्य का उदय** है। पुण्य के उदय के अनुसार प्राप्त अनेकानेक अनुकूलताओं को एक साथ भोगना संभव नहीं हो पाता; इस कारण पुण्य के उदय वाले जीव भी व्याकुल रहते हैं।

सम्पूर्ण जगत उक्त इच्छाओं से पीड़ित हो रहा है। दुःख का कारण एकमात्र ये इच्छायें हैं, बाह्य संयोग नहीं। संयोगी परपदार्थ तो परद्रव्य हैं। जब एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कर्ता-धर्ता ही नहीं है तो फिर परद्रव्य जीव को सुखी-दुखी कैसे कर सकते हैं ?

एक ओर भरतचक्रवर्ती के पास अपार भोगसामग्री थी; पर वह भोगसामग्री उनका अहित नहीं कर पाई; वहीं दूसरी ओर मिथ्यादृष्टि द्रव्यलिंगी मुनि के पास रंचमात्र भी भोगसामग्री नहीं होती, फिर भी उनके आत्मा का कल्याण नहीं हो पाता। इससे सहज ही सिद्ध है कि बाह्यसामग्री हित-अहित करनेवाली नहीं है; आत्मा का अहित करनेवाली इच्छायें ही हैं। यही कारण है कि इच्छाओं के निरोध को तप कहा गया है।

लोक में तीव्र कषाय से जिसे बहुत इच्छायें हैं, उन्हें दुःखी कहते हैं और मन्दकषाय से जिन्हें कम इच्छायें हैं, उन्हें सुखी कहते हैं; परन्तु सत्य तो यह है कि बहुत इच्छा वाले जीव बहुत दुःखी हैं और कम इच्छा वाले जीव कम दुःखी हैं; पर दुःखी तो दोनों ही हैं, सुख दोनों में से किसी को भी नहीं है।

इन इच्छाओं की उत्पत्ति मिथ्यात्व, अज्ञान और असंयम के कारण होती है तथा आकुलतारूप होने से ये इच्छायें दुःखरूप ही हैं।

विषय और कषायरूप इच्छाओं की दुःखरूपता स्पष्ट करते हुये पण्डित दौलतरामजी देव-स्तुति में लिखते हैं -

आतम के अहित विषय-कषाय, इनमें मेरी परिणति न जाय।

उक्त पंक्ति में यह कहा गया है कि आत्मा का अहित करने वाले मूलतः विषय और कषायें हैं।

'आतम के अहित विषय-कषाय' के साथ 'इनमें मेरी परिणति न जाय' लिखकर दौलतरामजी ने तीसरी इच्छा की ओर संकेत किया है।

जब पाँच इन्द्रियों के विषयों को छोड़ने की बात चलती है तो हम भोग-सामग्री को छोड़ने की बात करने लगते हैं, पर मैं यह नहीं कहता कि विषय-सामग्री के भोग का त्याग नहीं करना चाहिये; पर यह अवश्य कहना चाहता हूँ कि यहाँ पण्डित टोडरमलजी विषय का अर्थ परज्ञेयों को जानने-देखने की इच्छा को बता रहे हैं और उसे ही दुःखरूप सिद्ध कर रहे हैं। उनका कहना यह है कि जानने-देखने की इच्छावालों को क्षायोपशमिक ज्ञान होता है। इसकारण उनकी जानने की शक्ति तो होती है अत्यन्त अल्प और इच्छा सम्पूर्ण जगत को जानने की रहती है; इसकारण वे निरन्तर आकुलित रहते हैं।

इसीप्रकार कषाय शब्द के व्यापक अर्थ तक भी हम नहीं पहुँच पाते। अकेली क्रोध-मान ही कषायें नहीं हैं, हास्यादि भी कषायें हैं। जब हम खिलखिलाकर हँस रहे होते हैं, तब क्या हम यह अनुभव करते हैं कि हम कषाय कर रहे हैं, इसलिये दुःखी हैं। हँसते समय तो हम स्वयं को सुखी ही मानते हैं, आनन्दित ही होते हैं।

इसीप्रकार जब हम डर रहे होते हैं, शोक कर रहे होते हैं, ग्लानि से भर गये होते हैं; तब भी क्या हम यह अनुभव करते हैं कि हम कषाय कर रहे हैं। विगत प्रकरण में तो मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद को भी कषाय शब्द में गर्भित किया गया है, जिसकी चर्चा विस्तार से हो चुकी है।

अरे भाई! पण्डित टोडरमलजी तो यहाँ यह कहना चाहते हैं कि पाँचों इन्द्रियों के माध्यम से जानने-देखने की इच्छा का त्याग विषय का त्याग है और मिथ्यात्वादि कषायभावों के अनुसार कार्य करने की इच्छा के त्याग का नाम कषाय का त्याग है।

इसीप्रकार पाप और पुण्य के उदय रूप इच्छाओं के संबंध में भी गहरे चिन्तन की आवश्यकता है।

प्रतिकूल संयोगों की प्राप्ति को हम पाप का उदय मानते हैं और अनुकूल संयोगों की प्राप्ति को पुण्य का उदय; पर यहाँ तो पाप कर्म के उदय में प्राप्त प्रतिकूल संयोगों को दूर करने की इच्छा को पाप का उदय कहा जा रहा है। तात्पर्य यह है कि असली पाप का उदय तो उक्त प्रतिकूल संयोगों को टालने की इच्छा का नाम है। हम उस इच्छा का अभाव तो करते नहीं, करना भी नहीं चाहते और संयोगों के हटाने के विकल्पों में उलझे रहते हैं; जबकि इनका हटना-न-हटना हमारे हाथ में नहीं है।

इसीप्रकार हम तो पुण्य के उदय से प्राप्त भोग सामग्री को पुण्य का

उदय समझते हैं; जबकि यहाँ उक्त सामग्री को भोगने की इच्छा को पुण्य का उदय कहा गया है और उस इच्छा का त्याग करने की प्रेरणा दी जा रही है, परन्तु हम तो पुण्य के उदय की कामना करते हैं।

कदाचित् किसी जीव को पुण्य के उदय से भोगसामग्री प्राप्त हो जाये, कषायों की पूर्ति का प्रसंग बन जाये, मान-सम्मान प्राप्त हो जाय; जिसका बुरा चाहता हो, कदाचित् उसका बुरा भी हो जाये; सभी प्रकार की इच्छाओं के अनुकूल प्रसंग बन जाये; तब भी वह जीव सुखी नहीं हो सकता; क्योंकि वह सभी प्रकार की इच्छाओं की पूर्ति में एकसाथ प्रवृत्त नहीं हो सकता।

एक समय में एक प्रकार की अनुकूलता को ही भोग सकता है। इस कारण जिस समय वह एक वस्तु का उपभोग कर रहा है, उसकी अनुकूलता का वेदन न करके, जिन्हें भोगना संभव नहीं हो पा रहा है, उनको न भोग पाने की आकुलता का वेदन करके दुखी होता रहता है।

दश-दश मकान हैं, एक-एक में अनेक वातानुकूलित कमरे हैं; दश-बीस वातानुकूलित गाड़ियाँ खड़ी हैं; पर जेठ की दुपहरी में विशाल पाण्डाल में सेठ साहब का अभिनंदन हो रहा है। भयंकर गर्मी है, लू चल रही है। बिजली गायब है, अत: पंखे भी बंद हैं; फिर भी सेठ साहब वहाँ बैठे हैं। यद्यपि मान कषाय का पोषण हो रहा है, पर भयंकर गर्मी की असह्य आकुलता भी हो रही है।

रनों का अंबार लगाता हुआ क्रिकेट का खिलाड़ी बल्लेबाज आनंदित होता हुआ भी पसीने से लथपथ है, उसका गला प्यास से सूखा जा रहा है, शतक बन गया है; पर खेल के मैदान में वह बेहोश हो गया है।

वे देश के प्रधानमंत्री बन गये हैं, चारों ओर जय के नारे लग रहे हैं; पर गांव-गांव में घूम-घूम कर चुनाव प्रचार करते हुए पस्त हो गये हैं।

अब आप ही बताइये कि इसप्रकार के पुण्य के उदय वालों को सुखी कहें या दुःखी ?

इसप्रकार हम देखते हैं कि इस प्रकरण में पण्डितजी ने चारों प्रकार की इच्छाओं को समान रूप से दुःखरूप सिद्ध किया है और उन्हें त्यागने की प्रेरणा दी है। अत्यन्त स्पष्ट शब्दों में कहा है कि इच्छायें मिथ्यात्व, अज्ञान और असंयम से होती हैं और स्वयं दुःखरूप हैं; अतः सभी प्रकार की सभी इच्छायें सम्पूर्णत: त्याग करने योग्य हैं।

इसके बाद मोक्ष सुख और उसकी प्राप्ति का उपाय बताते आचार्य कल्प पण्डित टोडरमलजी लिखते हैं -

''अब जिन जीवों को दुःख से छूटना हो वे इच्छा दूर करने का उपाय करो तथा इच्छा दूर तब ही होती है; जब मिथ्यात्व, अज्ञान, असंयम का अभाव हो और सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की प्राप्ति हो। इसलिए इसी कार्य का उद्यम करना योग्य है।

ऐसा साधन करने पर जितनी-जितनी इच्छा मिटे, उतना-उतना दुःख दूर होता जाता है और जब मोह के सर्वथा अभाव से सर्व इच्छा का अभाव हो, तब सर्व दुःख मिटता है, सच्चा सुख प्रगट होता है।

तथा ज्ञानावरण-दर्शनावरण और अन्तराय का अभाव हो, तब इच्छा के कारणभूत क्षायोपशमिक ज्ञान-दर्शन का तथा शक्तिहीनपने का भी अभाव होता है, अनन्त ज्ञान-दर्शन-वीर्य की प्राप्ति होती है तथा कितने ही काल पश्चात् अघाति कर्मों का भी अभाव हो, तब इच्छा के बाह्य कारणों का भी अभाव होता है; क्योंकि मोह चले जाने के बाद कोई भी कर्म किसी भी काल में कोई इच्छा उत्पन्न करने में समर्थ नहीं थे। मोह के होने पर कारण थे, इसलिए कारण कहे हैं; उनका भी अभाव हुआ, तब जीव सिद्धपने को प्राप्त होते हैं।

वहाँ दुःख का तथा दुख के कारणों का सर्वथा अभाव होने से सदा-काल अनुपम, अखंडित, सर्वोत्कृष्ट आनन्द सहित विराजमान रहते हैं।[१]''

इसके उपरान्त वे आठों कर्मों के अभाव में प्रगट होनेवाले अनाकुल भावरूप सुख को विस्तार से स्पष्ट करते हैं, एक-एक कर्म के अभाव में किस-किसप्रकार का अनाकुल भाव (सुख) प्रगट होता है - यह समझाते हैं।

ज्ञानावरण और दर्शनावरण के क्षयोपशम से देखना-जानना सीमित होता था और मोह के उदय से सभी को एक साथ देखने-जानने की इच्छा रहती थी। अत: आकुलता होती थी।

अब सिद्धदशा में ज्ञानावरण-दर्शनावरण के क्षय से सभी पदार्थों को देखने-जानने लगा और मोह के अभाव में देखने-जानने की इच्छा का सम्पूर्णत: अभाव हो गया तथा निराकुल भाव सम्पूर्णत: प्रगट हो गया; अत: परम सुखी हो गया।

मोह के उदय से होनेवाले मिथ्यात्वादि कषाय भावों का अभाव होने से मिथ्यात्व और कषायभावों से होनेवाले दुख का अभाव हो गया।

मिथ्यात्व के अभाव से परपदार्थों में होनेवाली इष्ट-अनिष्ट बुद्धि का अभाव हो गया; इसीप्रकार क्रोध, मान, माया और लोभ कर्म के अभाव से ये भाव भी नहीं रहे।

पापरूप अशुभ नामकर्म, नीच गोत्र, अशुभ आयु और असाता वेदनीय कर्म तथा पुण्यरूप शुभ नामकर्म, उच्च गोत्र, शुभ आयु और साता वेदनीय कर्म का अभाव होने से प्रतिकूल-अनुकूल संयोगों का अभाव हो गया; अत: उनसे होनेवाले सांसारिक सुख-दुःख का भी अभाव हो गया।

इसप्रकार घाति और अघाति कर्मों के अभाव होने से तज्जन्य आकुलता का अभाव हो जाने से सिद्ध भगवान अनंत अतीन्द्रिय आनन्द को प्राप्त हो गये हैं। अत: अब वे अनन्तकाल तक प्रतिसमय अनन्त, अतीन्द्रिय, अव्याबाध आनन्द (सुख) का उपभोग करते रहेंगे।

इसप्रकार इस तीसरे अधिकार का समापन करके अन्त में उपदेश देते हुए, आदेश देते हुए, प्रेरणा देते हुए पण्डित टोडरमलजी लिखते हैं-

''हे भव्य ! हे भाई !! तुझे जो संसार के दुःख बतलाए सो, वे तुझ पर बीतते हैं या नहीं - यह विचार कर; और तू जो उपाय करता है, उन्हें झूठा बतलाया, सो ऐसे ही हैं या नहीं - यह विचार। तथा सिद्धपद प्राप्त होने पर सुख होता है या नहीं, उसका भी विचार कर।

जैसा कहा है, वैसी ही प्रतीति तुझे आती हो तो तू संसार से छूटकर सिद्धपद प्राप्त करने का हम जो उपाय कहते हैं; वह कर, विलम्ब मत कर। यह उपाय करने से तेरा कल्याण होगा।[२]''

इसके बाद आनेवाले चौथे अधिकार में पण्डितजी मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान और मिथ्याचारित्र का निरूपण आरंभ करते हैं; जो सातवें अधिकार तक चलेगा; जिसमें अगृहीत मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान और मिथ्याचारित्र तथा गृहीत मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान और मिथ्याचारित्र का स्वरूप विस्तार से समझाया जायेगा।

---

१. मोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ-७२ २. मोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ-७५

पुस्तक समीक्षा

ब्र. यशपालजी कृत **'मोक्षमार्ग की पूर्णता'** पुस्तक को पढ़कर काशी, हिन्दु विश्वविद्यालय वाराणसी से **डॉ. जयंत उपाध्याय** लिखते हैं -

''प्रस्तुत ग्रंथ जैनदर्शन में वर्णित द्रव्य-गुण-पर्याय, कर्म की अवधारणा का स्पष्ट विवेचन तो करता ही है साथ ही इसमें प्रश्नोत्तरी के माध्यम से अन्तर्निहित वैचारिक विवादों का पूर्ण निराकरण भी किया है।

पुस्तक का द्वितीय खण्ड रत्नत्रय को समर्पित है तथा तृतीय खण्ड संग्रहीत खण्ड है, जिसमें सम्यग्दर्शन की विभिन्न परिभाषाओं तथा उनमें अन्तर्संबंधों की चर्चा की गई है। इस परिचर्चा से जहाँ एक ओर जैनधर्म की विशुद्धता का ज्ञान होता है, वहीं दूसरी ओर धर्म में उपस्थित विलक्षणता में विश्वधर्म बनने की संभावना की झलक भी दिखती है।

प्रस्तुत पुस्तक जहाँ एक ओर दर्शन की गुह्यता को सरल बनाती है, वहीं दूसरी ओर धर्म की मार्मिक रोचकता को संदेहात्मक नहीं होने देती साथ ही दोनों की तार्किक वैज्ञानिकता को पुष्ट आधार भी प्रदान करती है। पुस्तक पठनीय एवं संग्रहणीय है, जिसमें लेखक का प्रयास सरल से सरलतम व्याख्या की ओर है जिसे मानव मन सहजता से आत्मसात कर जैनधर्म की मार्मिकता का सानिध्य प्राप्त कर लेता है।''

मंगलार्थी छात्रों को अपूर्व अवसर

तीर्थधाम मंगलायतन, अलीगढ़ में आत्मार्थी छात्रों को आध्यात्मिक एवं लौकिक शिक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन संचालित है।

इस वर्ष विद्यानिकेतन में कक्षा 8 और 9 में प्रवेश दिया जायेगा। अंग्रेजी माध्यम के विद्यार्थी डी.पी.एस. अलीगढ़ में और हिन्दी माध्यम के विद्यार्थी के.एल. जैन इण्टर कॉलेज, सासनी में पढ़ने जाते हैं। प्रवेश के इच्छुक छात्र प्रवेश फार्म मँगाकर तथा भरकर 15 फरवरी 2009 तक निम्न पते पर भेजें - तीर्थधाम मंगलायतन, अलीगढ़–आगरा मार्ग,

निकट हनुमान चौकी, सासनी, अलीगढ़ - 204216 (उत्तरप्रदेश)

फोन नं. - 09897069969, 09927013722

डॉ. भारिल्ल के साहित्य पर शोध...

अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के साहित्य पर अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन राजस्थान प्रदेश के प्रदेश प्रभारी श्री जिनेन्द्र शास्त्री की धर्मपत्नी श्रीमती सीमा जैन उदयपुर ने **'डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के साहित्य का समालोचनात्मक अनुशीलन'** विषयक शोधकार्य करने के लिये मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय उदयपुर में अपना रजिस्ट्रेशन कराया है, जिसको विश्वविद्यालय ने स्वीकृति प्रदान कर दी है। इनकी निर्देशिका डॉ. मंजू चतुर्वेदी-विभागाध्यक्ष राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय उदयपुर है।

उदयपुर निवासी श्री जिनेन्द्र एवं सीमा जैन डॉ. भारिल्ल से इतने अधिक प्रभावित हुये कि उन्होंने उनपर ही शोध करने का निर्णय लिया।

ज्ञातव्य है कि डॉ. महावीरप्रसादजी शास्त्री उदयपुर द्वारा पूर्व में डॉ. भारिल्ल के व्यक्तित्त्व एवं कर्तृत्त्व पर भी पीएच. डी.की जा चुकी है।

शोक समाचार

1. **फुलेरा निवासी श्री गंभीरमलजी सोनी** का 82 वर्ष की अवस्था में दिनांक 13 जनवरी, 09 को शांत परिणामों से देहावसान हो गया है। आप अच्छे लेखक तथा प्रवचनकार थे और जिनवाणी केप्रचार-प्रसार में सदैव सक्रिय रहते थे। श्री टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा चलनेवाली सभी गतिविधियों में आपका सक्रिय सहयोग रहता था। आपकी स्मृति में आपके परिवार द्वारा जैनपथप्रदर्शक को 1100/- रुपये प्राप्त हुये हैं; एतदर्थ धन्यवाद !

2. **दिल्ली निवासी श्री सुरेन्द्रकुमारजी जैन** का दिनांक 21 जनवरी, 09 को प्रात: 4 बजे 78 वर्ष की आयु में देहावसान हो गया। आपका पूरा परिवार प्रारम्भ से ही गुरुदेव के सम्पर्क में रहा। आप सोनगढ़ एवं टोडरमल स्मारक जयपुर में लगनेवाले शिविर में उपस्थित रहते थे। अशोकनगर (दिल्ली) में आयोजित पंचकल्याणक के अवसर पर आपको बाल तीर्थंकर के पिता बनने का सौभाग्य मिला था।

3. **शाहपुरा (जबलपुर) निवासी श्री ज्ञानचन्दजी जैन** का 21 जनवरी, 09 को 82 वर्ष की आयु में रोड एक्सीडेंट में देहावसान हो गया है। आप सरल स्वभावी एवं धार्मिक विचारों के व्यक्ति थे। आप श्री टोडरमल जैन महाविद्यालय जयपुर के स्नातक श्री पवनजी शास्त्री किशनगढ के पिता एवं श्री प्रवेशजी शास्त्री करेली के नानाजी थे। आपकी स्मृति में आपके परिवार द्वारा जैनपथप्रदर्शक को 500/- रुपये प्राप्त हुये हैं; एतदर्थ धन्यवाद !

4. **सूरत निवासी श्रीमती कमलादेवी बड़जात्या** ध.प. श्री नेमीचन्दजी बड़जात्या का दिनांक 8 जनवरी, 09 को समताभाव पूर्वक समाधिमरण हुआ। आप धार्मिक, स्वाध्यायी एवं आत्मार्थी महिला थीं। आपकी स्मृति में 201/- रुपये प्राप्त हुये हैं।

दिवंगत आत्मायें शीघ्र ही अभ्युदय को प्राप्त हों - ऐसी मंगल भावना है।

- प्रबन्ध सम्पादक

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा**, डबल एम.ए.(जैनविद्या व तुलनात्मक धर्मदर्शन; इतिहास), नेट, एम.फिल (जैन दर्शन)
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-४, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो निम्न पते पर भेजें -
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
E-Mail : ptstjaipur@yahoo.com **फैक्स :** (0141) 2704127